श्रीरासपूर्णिमा २०२६



२५/१०/२०२६

।।श्रीराधा।।

श्रीरासपूर्णिमा उत्सव २०२६

श्रीरासपूर्णिमा उत्सव में आप सभी का हार्दिक स्वागत है। जो सदस्य ऑनलाइन सम्मिलित हुए हैं, आपका भी हार्दिक स्वागत है। आज का उत्सव अत्यंत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि वर्षभर जो भी जप-तप-साधन हमारे द्वारा किया गया है, उसका फल आज श्रीरासपूर्णिमाकी इस दिव्य रात्रि को श्री रासेश्वरी एवं श्रीरसराज अत्यंत कृपा करके हम सभी को प्रदान करते हैं। इस उत्सव में सम्मिलित होने का सौभाग्य हमें प्रदान किया गया, चाहे ऑफलाइन, चाहे ऑनलाइन, इस महती कृपा के लिए हमारा नतमस्तक होकर आभार और प्रणाम निवेदित है श्री युगल सरकार, श्री बाल-कृष्ण भगवान, श्रीमन्महात्रिपुरसुंदरी महारानी, श्री अष्ट-सखियाँ, परम पूज्य बाबूजी-बाबा, परम पूज्य महाराजजी-ठाकुरजी एवं परम पूज्या नानीजी-नानाजी के श्री चरणों में। पूज्या माँ एवं पूज्या मौसी के वात्सल्यमय चरणों में प्रणाम करते हुए उनसे अनुमति की प्रार्थना है कि आज के उत्सव में हम प्रवेश कर सकें और इसका अधिक से अधिक लाभ उठा सकें।

आज की लीला के आधार ग्रंथ हैं परम पूज्य बाबूजी द्वारा लिखित पुस्तकें "श्रीराधा माधव चिन्तन" एवं "श्रीरासपञ्चाध्यायी" तथा परम पूज्य श्रीराधाबाबा द्वारा रचित "केलिकुञ्ज" पुस्तक। "केलिकुञ्ज" अन्तर्गत् 'रासनृत्यलीला' के आधार पर ही आज रास-पूर्णिमा की लीला की रूपरेखा निर्धारित हुई है। यहाँ जो रासवेदी का निर्माण किया गया है वह परम पूज्य बाबा द्वारा वर्णित दिव्य रास वेदी के आधार पर ही है।

आज के उत्सव में प्रवेश करने से पहले हम सभी के लिए इस प्रश्न पर विचार करना आवश्यक है कि श्री युगल सरकार और उनकी सखियों का यह रास-उत्सव क्या है?

पूज्य नानाजी एवं पूज्या माँ ने हमें समझाया कि रास उत्सव का आधार है रस, अर्थात् भगवत्-प्रेम का रस - और यह रस भगवान का ही रूप है। अब प्रेम या रस का अनुभव अकेले-अकेले तो हो नहीं सकता। अपने अलावा कोई और भी होना चाहिए, जिसके साथ प्रेम का व्यवहार किया जा सके। इसलिए रास के उत्सव में भगवान् श्री कृष्ण अनेक रूप धारण करते हैं, वे ही श्री राधा बनते हैं, वे ही सखियों-मंजरियों-गोपियों का समूह बनते हैं, और यह वे इसलिए करते हैं जिससे इन सभी रूपों के माध्यम से वे एक दूसरे को प्रेम प्रदान करने का रस - और एक दूसरे से प्रेम प्राप्त करने का रस - इन दोनों का अनुभव कर सकें।

इस तथ्य को समझने के लिए गोरखपुर गीता वाटिका में शरदपूर्णिमा के अवसर पर परम पूज्य बाबूजी द्वारा दिए गए एक प्रवचन का आलम्बन लेते हैं। प्रवचन के कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत हैं। पूज्य बाबूजी कहते हैं - 'रास' शब्दको सुनकर हमलोग प्रायः जो रासलीला होती है, उसीकी ओर देखते हैं, परन्तु वह जो भगवान्का रास है, उसको थोड़ा-सा समझ लेना चाहिये। 'रास' शब्दका मूल है रस और रस है भगवान्का रूप - **' रसो वै सः '**। एक ऐसी दिव्य क्रीडा होती है, जिसमें एक ही रस अनेक रसोंके रूपमें होकर अनन्त-अनन्त रसोंका समास्वादन करता है और यह एक ही रस, रस-समूहके रूपमें प्रकट होकर स्वयं ही आस्वाद्य, स्वयं ही आस्वादक, लीला, धाम, विभिन्न आलम्बन और उद्दीपनके रूपमें प्रकट हो जाता है तथा एक दिव्य लीला होती है, उसीका नाम 'रास' है।

यह नित्य चलती रहती है, और चलती ही रहेगी। इसका कोई ओर-छोर नहीं है। कबसे शुरू हुई और कबतक चलती रहेगी, यह कोई बता नहीं सकता है। कभी-कभी कुछ बड़े ऊँचे प्रेमी महानुभावोंके प्रेमाकर्षणसे हमारी इस भूमिमें भी रासलीला का अवतरण होता है।

इस रासलीलाके यथार्थ रूपको और परम माधुर्यको समझनेके लिये सबसे पहले यह देखना चाहिये कि **यह भगवान्की दिव्य चिन्मयी लीला है। गोपियाँ भगवत्स्वरूप हैं, वे**

चिन्मयी हैं, सच्चिदानन्दमयी हैं। गोपियोंकी दृष्टिमें हैं केवल चिदानन्दस्वरूप प्रेमास्पद श्रीकृष्ण, बस ! उनके हृदयमें श्रीकृष्णको तृप्त करनेवाला प्रेमामृत आ गया है। यही उनके हृदयमें छलकता रहता है। इसीलिये श्रीकृष्ण उनके हृदयके प्रेमामृतका रसास्वादन करनेके लिये लालायित होते हैं, लालायित रहते हैं।

यह भगवान्‌का मिलन कब होता है? जब किसी और वस्तुकी कल्पना भी मनमें नहीं रहती है, और भगवान्‌के मिलनके लिये चित्त अत्यन्त आतुर हो जाता है। यह दशा जब होती है और भगवान् उसे देखते हैं कि अब यह ज़रा-सा इशारा पाते ही, ज़रा-सा संकेत पाते ही, सर्वस्वका त्याग तो कर ही चुका है, उस सर्वस्वके त्यागको प्रत्यक्ष करके मेरी ओर आ जायेगा; इस प्रकारकी स्थिति जब भगवान् देखते हैं तो भगवान् मुरली बजाते हैं। यह भगवान्‌का आवाहन होता है कि उनकी साधना पूर्ण हुई।

जबतक जगत्‌की स्मृति रहती है तबतक हम भगवान्‌का आवाहन नहीं सुनते। यहाँ बस यही एक समझनेकी बात है। हम यह कामना करें, इच्छा करें कि हमारा मन गोविन्द ले जायें पर तुम अपने मनको जगतसे तो खाली करो। उसमें कूड़ा-करकट भर रखे हो, उसे निकाल दो। तब गोविन्द हर कर ले जायेंगे। गोपियोंने सब कुछ अपने मनसे निकाल दिया। इसलिये उनके मनको गोविन्द हर कर ले गये।

श्रीराधाकृष्ण खाली लोगोंको दिखानेके लिये दो बने हैं, लेकिन हैं एक ही। कृष्ण अपने आप ही लीला करते हैं, पर यह दिखलाया है इसमें कि कितना ऊँचे-से-ऊँचा त्याग होना चाहिए - जो भगवान्‌की ओर जाना चाहता है उस साधकमें। जब सारा-का-सारा त्याग हो करके श्रीकृष्णके सुखमें जाकर विलीन हो गया - उनका जीवन, उनकी क्रिया, उनके सारे काम, उनकी कुल-चेष्टायें श्रीकृष्णमें जाकर विलीन हो गयीं - इस प्रकारका था इनका त्यागमय जीवन।

तीन बात करनी होगी अगर किसीको गोपी बनना हो तब। साड़ी, लहँगा नहीं मँगाना है। हम सब गोपी बन सकते हैं।

(१) अपने मनसे जगत्‌को निकाल देना।

(२) भगवान्‌को देनेके लिये मनको तैयार कर देना।

(३) किसी भी कारणसे, किसी भी हेतुको लेकर कहीं पर भी अटकनेकी भावना न करना।

यह अटकना गोपीमें नहीं है। ये कहीं भी अटकी नहीं। न गहनोंने अटकाया, न कपड़ोंने अटकाया, न भोजनने अटकाया, न घरवालोंने अटकाया। भगवान्‌को सुख देने गयीं, सुख लेने नहीं। यही सार है। अब भगवान्‌को देकर उनको सुख मिलेगा। जब भगवान्‌को दिया, भगवान्‌को सुखी देखा, तो अपनेको परम सुख - और उनको सुखी देखा, तो भगवान्‌को परम सुख। 'एक दूसरेको सुखी बनाकर सुखी होना' - इसीका नाम 'रास' है।

इसलिये इतनी बात अपनी जानकारीके लिये, अपने लिये होनी चाहिये। वह यह है कि भगवान्‌के लिये त्याग करें। विषय-भोगका त्याग करें। संसारकी आसक्ति, ममताका त्याग करें। सारी आसक्ति, सारी ममता भगवान् में जाकरके हमारी लग जाय। इतना हम गोपी भावसे ले लें, इतना ही हम राससे ले लें तो हमारा जीवन पवित्र हो जाय। फिर रासमण्डलमें तो भगवान् ले जायेंगे। वह तो कहीं उनकी इच्छा होगी या श्रीराधारानीकी कहीं कृपा होगी, वह किसी सखी-मञ्जरीसे कह देंगी अपने लिये, तो वह ले जायेगी। हम अपने पुरुषार्थसे नहीं जा सकते। हमारा पुरुषार्थ जहाँ समाप्त होता है वहाँ प्रेमका पाठ आरम्भ होता है।

रसराज श्रीकृष्ण किस प्रकार इस दिव्य रस का विस्तार करते हैं, इस विषय में "श्रीराधामाधव चिन्तन" पुस्तक में पूज्य बाबूजी कहते हैं - "परमतत्त्व श्रीकृष्ण निरुपम, निरुपाधि,

सत्, चित्, आनन्दघन हैं; सत् 'संधिनी', चित् 'चिति' और आनन्द 'ह्लादिनी' शक्ति हैं। ये 'ह्लादिनी' शक्ति स्वयं 'श्रीराधा' हैं, संधिनी 'वृन्दावन' बनी हैं और 'चिति' समस्त लीलाओंकी व्यवस्थापिका तथा आयोजिका 'योगमाया' हैं। श्रीराधा ही लीला-विहार के लिये अनन्त कायव्यूहरूपा गोपांगनाओंके रूपमें प्रकट हैं। भगवान् श्रीकृष्ण एकमात्र 'रस' हैं और उन दिव्य मधुरातिमधुर रसका ही यह सारा विस्तार है। भगवान् और भगवान्‌की शक्ति - यही वस्तुतः रस-तत्त्व हैं।''

आज के उत्सव में भगवान् श्रीकृष्ण ही श्रीराधा, सखियों, वृन्दावन धाम, श्रीयमुनाजी, रास वेदी बन कर हर रूप में हमारे समक्ष अवतरित हुए हैं - और वे अवतरित हुए है हमें रस प्रदान करने हेतु। इन सब के प्रति मन में आदर व कृतज्ञता भरकर सर्वप्रथम हम सब इनकी स्तुति करें।

नमस्तस्मै भगवते कृष्णायाकुंठमेधसे। राधाधर सुधासिन्धौ नमो नित्य विहारिणे।।

मैं उन भगवान श्रीकृष्ण को प्रणाम करता हूँ, जिनकी बुद्धि और शक्ति असीम हैं तथा जो श्रीराधा रानी के अधरामृत रूपी प्रेम-सागर में नित्य विहार करते हैं।

ऊँ कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने। प्रणत्क्लेशनाशाय गोविन्दाय नमोः नमः।।

वासुदेव के पुत्र, परमात्मा, भक्तों के दुखों को हरने वाले और समस्त जीवों को आनंद प्रदान करने वाले श्रीगोविंद को बार-बार प्रणाम है।

राधांकृष्ण स्वरूपांवै कृष्णं राधा स्वरुपिणम्। कलात्मानं निकुंजस्थं गुरु रूपं सदा भजे।।

श्रीराधा और श्रीकृष्ण एक-दूसरे के अभिन्न स्वरूप हैं। श्रीकृष्ण में श्रीराधा का और श्रीराधा में श्रीकृष्ण का स्वरूप विद्यमान है। निकुंज में विराजमान, दिव्य कलाओं से युक्त तथा गुरु-स्वरूप श्रीराधा-कृष्ण का मैं सदैव भजन करता हूँ।

धन वृन्दावन धाम है, धन वृन्दावन नाम। धन वृन्दावन वृक्ष जो सुमिरै स्यामा स्याम।।

धन्य है श्रीवृंदावन धाम, धन्य है इसका नाम और धन्य हैं यहाँ के वृक्ष, जो श्रीश्यामा-श्याम के स्मरण में लीन रहते हैं।

जमुना जल अँचवन करैं, जमुना जल में न्हाहिं। जहाँ-जहाँ जमुना बहै, तहाँ-तहाँ जम नाहि।।

जो यमुना जी के जल से आचमन करते हैं और उसमें स्नान करते हैं, उन पर यमुना जी की विशेष कृपा होती है। जहाँ-जहाँ यमुना जी प्रवाहित होती हैं, वहाँ यमराज का भय नहीं रहता।

अष्ट सखी करतीं सदा सेवा परम अनन्य। राधा-माधव-जुगल की, कर निज जीवन धन्य।।

इनके चरण-सरोज में बारंबार प्रनाम। करुना कर दें श्रीजुगल-पद-रज-रति अभिराम।।

श्रीराधा की आठों प्रमुख सखियाँ अनन्य प्रेम और निष्ठा से सदैव युगल सरकार की सेवा करती हैं। वे अपने जीवन को श्रीराधा-कृष्ण की सेवा में समर्पित करके धन्य हो जाती हैं।इन सखियों के चरणकमलों में बार-बार प्रणाम है। उनसे प्रार्थना है कि वे कृपा करके श्री राधा-माधव के चरणों की रज के प्रति सुंदर, मधुर और अटूट प्रेम प्रदान करें।

राधां रासेश्वरीं रम्यां गोविन्दमोहिनीं पराम्। कृष्णप्राणाधिके राधे! नमस्ते परमेश्वरी।।

हे श्रीराधा रानी! आप रासलीला की अधिष्ठात्री, परम सुंदर, श्रीगोविंद को भी मोहित करने वाली और सर्वोच्च दिव्य शक्ति हैं। हे राधे! आप श्रीकृष्ण को उनके प्राणों से भी अधिक प्रिय हैं। हे परमेश्वरी! आपको मेरा बार-बार प्रणाम है।

वृन्दावने रसमये रसकेलिकुंजे, रासेश्वरी रसिकराज विराजितान्ते।

रासस्थलीं कनकवेदि विचित्रशोभां, वन्दे सदा ब्रजधराम् प्रमदैकहेतुम् ॥

मैं उस श्रीवृंदावन धाम को सदा प्रणाम करता हूँ, जो दिव्य प्रेम-रस से परिपूर्ण है, जहाँ रसपूर्ण निकुंजों में श्रीराधा रानी, जो रास की अधिष्ठात्री हैं, और रसिकराज श्रीकृष्ण विराजमान हैं। वहाँ की रासस्थली स्वर्णमयी वेदी से सुशोभित है और अद्भुत शोभा से युक्त है। यह ब्रजभूमि दिव्य आनंद और प्रेम की एकमात्र स्रोत है।

यो ब्रह्म रुद्र शुक नारद भीष्ममुख्यै रालक्षितो न सहसा पुरुषस्यतस्य।

सद्योवशीकरण चूर्णमनन्त शक्तिम् तं राधिका चरणरेणुमनुस्मरामि।।

जिस परम पुरुष को ब्रह्माजी, रुद्र अर्थात् शिवजी, शुकदेवजी, नारदजी और भीष्म पितामह जैसे महान ज्ञानी एवं भक्त भी सहजता से नहीं जान पाते, उस अनंत शक्तिमान भगवान को भी श्रीराधिका के चरणों की रज अपने प्रेम के वश में करने की अद्भुत शक्ति रखती है। मैं श्रीराधा रानी की उस दिव्य चरण-रज का निरंतर स्मरण

करता हूँ।

आज नौका विहार उपरान्त श्रीश्यामसुन्दर श्रीप्रिया के साथ यमुना पुलिन पर विहार करते हुये अनुपमेय शोभा का विस्तार कर रहे हैं। उनकी इस छवि को देख सभी सखियाँ उन पर बलिहारी जा रही हैं।

फूली कुमुदिनी सरद सुहाई।
जमुना तीर धीर दोऊ विहरत कमल नील पीत कर माई ।।
नील वरन श्यामा रुचि कीनी, अरुन वरनता हरि मन भाई।
श्रीभट्ट लपटि रहे अंसन कर मानो मरकत कनक जराई ।।

भावार्थ: हे सखी! शरद ऋतु में सुंदर कुमुदिनी के फूल खिले हुए हैं। ऐसे मनोहारी समय में श्रीश्यामा-श्याम यमुना के तट पर बड़े प्रेम और आनंद के साथ विहार कर रहे हैं। श्रीराधा रानी के हाथ में नीले रंग का कमल है और श्रीकृष्ण के हाथ में पीले रंग का कमल सुशोभित हो रहा है। श्रीराधा रानी को नीले रंग की शोभा बहुत प्रिय लग रही है, जबकि श्रीकृष्ण के मन को लाल रंग की आभा भा रही है। श्री भट्टजी कहते हैं कि श्रीराधा-कृष्ण एक-दूसरे के कंधों पर प्रेमपूर्वक हाथ रखकर इस प्रकार लिपटे हुए हैं, मानो हरे मरकत मणि और स्वर्ण को एक साथ जड़ दिया गया हो।

विहार करते करते श्रीप्रिया-प्रियतम रास-वेदी तक आ पहुँचते हैं। आज वृन्दा सखी की दासियों ने अद्भुत् वेदी का निर्माण किया है। उस वेदीकी सजावट तो निराली ही है। चन्दनकी एक हाथ चौड़ी पाटियोंसे गोलाकार विस्तृत वेदी बनायी गयी है, जिसका व्यास लगभग सौ गज है। बीचमें बालू भरकर उसे ऊँचा किया गया है और उसपर पीले रंगकी सुन्दर कालीन बिछी है।

वेदीके चारों ओर सोनेके गमलोंकी दो पंक्तियाँ हैं। पहली पंक्ति में हरी लताओंसे लिपटे, पीले पुष्पोंसे लदे वृक्ष हैं, जिनकी विलक्षण सुगन्धसे समस्त पुलिन सुवासित हो रहा है। दूसरी पंक्ति में सघन, महीन पत्तियोंवाले छोटे वृक्ष हैं, जिनमें खिले गुलाबके पुष्प भी मधुर सुगन्ध बिखेर रहे हैं।

वेदीके किनारे-किनारे तीन-तीन हाथ की दूरीपर सोलह-सोलह हाथ ऊँचे चन्दनके खम्भे हैं, जिन्हें उजले कमलोंसे इस प्रकार सजाया गया है कि वे कमलमय प्रतीत हो रहे हैं। ऊपर चन्दनकी छड़ियोंसे खम्भोंको जोड़कर कमलोंके सुन्दर मेहराब बनाये गये हैं। उनसे कमलमय गमले लटक रहे हैं। स्थान-स्थानपर जड़ी हुई विलक्षण मणियोंके विविध प्रकाशसे वेदी अद्भुत चमक रही है।

वेदीसे नीचे पुलिनकी बालुकापर छः-छः हाथकी दूरीपर बड़े गमलोंमें लगभग पाँच हाथ ऊँचे रजनीगन्धाके वृक्ष लगे हैं, जिनपर पुष्पोंके गुच्छे लटक रहे हैं। वेदीसे चालीस हाथ दक्षिण और बीस हाथ उत्तरकी ओर श्रीयमुनाजी की धाराएँ प्रवाहित हो रही हैं। उनके पास जानेके लिये तीन हाथ चौड़े सुन्दर पथ वेदीसे सटे बने हैं, जिनके किनारे भी रजनीगन्धाके गमले सजे हैं।

वेदीके पश्चिमी किनारेपर, ठीक मध्यमें, धरतीसे आठ हाथ ऊँचाईपर पुष्पोंका सिंहासन बना है। उसकी सीढ़ियोंसहित सम्पूर्ण रचना उजले कमलोंसे सुसज्जित है। आसपास कमलपत्रों और हरी पत्तियोंकी सजावट है तथा चारों ओर नीले रेशमी वस्त्र लगे हैं। उनपर मणियों और चन्द्रमाकी शुभ्र किरणोंका प्रकाश पड़नेसे ऐसा लगता है मानो यमुनाके प्रवाहमें कमलोंका वन हो और उसके बीच स्वाभाविक रूपसे कमल-सिंहासन बन गया हो। यमुना-पुलिनपर बहनेवाली शीतल, मन्द, सुगन्धित वायुसे रेशमी वस्त्र धीरे-धीरे हिलते हैं, मानो यमुनाका जल लहरा रहा हो। वेदीका मध्यभाग श्री

प्रिया प्रियतम के रास-नृत्यके लिये खाली रखा गया है।

विहार उपरान्त वृन्दा सखी श्रीप्रिया-प्रियतम को सिंहासन पर विराजित कर देती हैं, और फिर सखियाँ मिलकर श्रीयुगल की आरती उतारती हैं -

गाओ सखी आरती प्रिया और प्यारे की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की।
कंचन थार कपूर सजाओ, धूप दीप कर चँवर ढुलाओ
बलि-बलि जावो सखी कुँज बिहारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास विहारी की।
मोर मुकुट कुंडल वनमाला मुरली अधर धरे बैठे नन्दलाला
हिय में लखो री छवि बाँके बिहारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की।
सीस चन्द्रिका की छवि न्यारी स्वेत बरन सोहे तन सारी
ललित किशोरी राधे बरसाने वारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की।
बैठे सिंहासन दिए गलबाहीं रसिक जनन हिय बसत सदा ही
ब्रज जीवन धन रास बिहारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की।

भावार्थ- हे सखी! प्रिया और प्यारे की आरती गाओ। वृषभानु जी की लाडली की और गिरिराज पर्वत को धारण करने वाले भगवान् श्री कृष्ण की आरती गाओ। सोने के थाल पर कपूर सजाओ। धूप और दीपक जला कर चँवर ढुलाओ। हे सखी! तुम कुंजों में विहार करने वाले बिहारी जी पर वारि-वारि जाओ। श्री नन्दलाल मोर मुकुट, कुंडल और वनमाला धारण किये हुये, होठों पर मुरली धरे विराजित हैं। श्री रास विहारी की यह छवि हृदय में निहारकर भानुलली और गिरिवरधारी की आरती गाओ। श्री राधाजी के शीश पर चन्द्रिका की छवि बहुत ही सुन्दर लग रही है। तथा उनके गौरवर्ण शरीर पर सफेद साड़ी अत्यन्त शोभा पा रही है। बरसाने वाली वृषभानु लली और गिरिवर धारी श्री कृष्ण की आरती गाओ। श्री प्रिया प्रियतम गले में बांहे डालकर सिंहासन पर बिराजित है, उनकी यह छवि रसिक जनों के हृदय में सदा ही बसी रहती है। ब्रज के जीवनधन रास बिहारी की और वृषभानु लली की आरती गाओ।

आरती के उपरान्त सभी सखियाँ, मञ्जरियाँ एवं दासियाँ श्रीयुगल की सेवा प्रारम्भ करती हैं। कोई शीतल जल की झारी, पानी से भरी परात, गुलाबपाश, पिचकारी, छोटी-छोटी प्यालियों में खस, गुलाब, मेंहदी, मोतिया आदि अत्यन्त सुगन्धित इत्र, और फिर इन प्यालियों से भरी परात - इस प्रकार सब सेवा की सामग्री ला-ला कर रखती जाती हैं। सखियाँ श्रीयुगल को जलपान करा कर के उन्हें पान का बीरा प्रस्तुत करती हैं। उसे पाने के पश्चात् प्रियतम श्रीश्यामसुन्दर सभी सखियों व वृन्दा को, दासियों को अपने हाथों से पान के बीरे पवाते हैं। इस परस्पर के प्रेम विनिमय से सभी आनन्द में सराबोर एक अनिर्वचनीय प्रेमरस में डूब जाते हैं।

इस परम प्रेमका आरम्भ स्व-सुख-वासनाके त्याग से ही होता है। इसका प्रारम्भ होता है 'तत्सुखसुखित्व' अर्थात् दूसरे के सुख से सुखी होने की पवित्र भावनासे, भगवान्को परम प्रियतम मानकर उनको सुख पहुँचानेवाली त्यागमयी रसमयी कल्पनासे। श्रीराधारानी और उनकी संगिनी गोपांगनाएँ इस रसमय, त्यागमय प्रेमकी परम आदर्श हैं। उनके लिये भगवान् श्रीकृष्ण ही एकमात्र 'स्व' हैं, उनका सुख ही सब गोपियों का "परम स्वार्थ" है, उनके प्रत्येक विचार और प्रत्येक कर्म 'श्रीकृष्णसुखार्थ' ही

होते हैं। यही गोपीभाव है। इस गोपीभावकी जहाँ पराकाष्ठा है और वह पराकाष्ठा भी जहाँ ससीम बनी हुई नित्य असीम अनन्तकी ओर प्रवाहित हो रही है, वह है - श्रीराधाभाव। इस महाभावकी जीती-जागती प्रत्यक्ष प्रतिमा हैं श्रीराधाजी।

यह जानकर कि प्रियतम श्रीकृष्ण की आन्तरिक अभिलाषा आज सब को निरवधि रस-दान कराने की है, श्रीराधा इस इच्छा की पूर्ति में तुरन्त क्रियाशील हो जाती हैं। वे तुरन्त आज के रास-रस वितरण की सारी व्यवस्था करने में संलग्न हो जाती हैं। अपनी प्यारी सखियों को वे तुरन्त निर्देश देती हैं कि आज कौन सखी कौनसा वाद्य यंत्र बजायेगी, कौन कहाँ नृत्य करेगी। यह सब केवल इसलिये कि प्रियतम के मन में इच्छा है कि आज रस की दिव्य धारा बहे।

हे ललिते गुन आगरी! तुम हो चतुर प्रवीन। सुन्दर साज समाज कौं बाँधो ठाठ नवीन।।
बीन विशाखा जी गहै चित्रा चतुर मृदंग। साज सितार सुदेवीजी तुम ललिते मुंहचंग।।
सारंगी श्री हरि प्रिया हितू रबाब विसाल। मधुर अलापैं उच्च स्वर इंदूलेखिका बाल।।
मनमोहन मुरली गहैं, मैं नाचूँ सजि साज। नदी बहै पुनि प्रेम की ऐसौ सजै समाज।।

भावार्थ- हे गुणों की खान ललिते! तुम चतुर और निपुण हो। सुन्दर सामग्री को जुटाकर एक अनोखी व्यवस्था करो। विशाखा जी वीणा सम्भालें, चतुर चित्राजी मृदंग। सुदेवीजी सितार सम्भालें और तुम ललिता मुहचंग। श्री हरिप्रियाजी सारंगी सम्भालें और हितु सखी रबाब की विशाल ध्वनि करेंगी। इन्दूलेखा जी उच्च स्वरों में मधुर आलाप लें। श्री श्यामसुन्दर मुरली बजाएँ, मैं सब के साथ नाचूँ। ऐसी व्यवस्था हो कि प्रेम की नदियाँ बहें।

या विधि आज प्रबंध करो सखि! आनन्द की रस धार बहैगी।
प्रीतम के मन की रुचि है यहि, मेरे हिये अभिलाष पुजैगी।।
तुम सबहू सुख पावौ महा रस, आनन्द बेलि हिये उलहैगी।
बरसै घन आनन्द प्रेम महा, तब सहजहि बेली फूलि फरैगी।।

भावार्थ- हे सखी! आज इस प्रकार से प्रबंध करो कि आनन्द की रस धार बहे। प्रीतम के मन में यही रुचि है, और ऐसा करने से मेरे मन की भी अभिलाषा पूरी होगी। इस महारास के प्रवाह में तुम सब सुख पाओ, हृदय में आनन्द की छटा से जब प्रेम की वर्षा होगी तब यह लता सहज ही (बिना किसी प्रयत्न के) फूलेगी-फलेगी।

श्रीराधा के मन में विचार आते ही सारी व्यवस्था पल भर में ही हो जाती है। प्रेमराज्य की यह विलक्षण अलौकिकता है।

अब श्रीवृन्दा सखी श्रीयुगल से प्रार्थना करती हैं - "प्यारे श्यामसुन्दर! अपने वन के समस्त चर-अचर प्राणियों की ओर से मैं प्रार्थना कर रही हूँ कि अपनी प्रिया एवं सखियों के साथ रास करके हम लोगों के नयनों को शीतल करो। प्यारे! असंख्य वर्षों से मैं तुम्हारा रास देख रही हूँ। प्रत्येक रात्रि को ही तुम रास रचाकर हमारे नयनों को शीतल करते हो; पर प्यारे श्यामसुन्दर! तुम्हारा यह रासनृत्य नूतन ही रहता है। मेरी प्रिय सहेलियों ने अत्यन्त उत्साह के साथ वेदी सजायी है। इस वेदी को अपने चरण-स्पर्शका दान करके मेरी सखियों एवं दासियों की सेवा स्वीकार कर लो।"

श्रीश्यामसुन्दर अतिश्य प्यारभरी दृष्टिसे वृन्दा एवं वृन्दाकी दासियोंको देखते हैं। उनकी दृष्टि पड़ते ही सब प्रेम एवं आनन्दमें बेसुध होने लगती हैं। श्रीश्यामसुन्दर सिंहासनकी सबसे नीचेवाली सीढ़ीपर खड़े हैं। श्रीप्रिया निर्निमेष नयनों से श्यामसुन्दरके सुन्दर मुखारविन्दकी शोभा निहार रही हैं। श्रीश्यामसुन्दर श्रीप्रियासे रास-मण्डलमें पधारनेके लिये अनुरोध करते हैं। श्रीप्रिया मुस्कुराती हुई

सिंहासनसे नीचे उतर पड़ती हैं तथा श्यामसुन्दरका कंधा पकड़कर खड़ी हो जाती हैं। उन्हें साथ लेकर अत्यन्त मदभरी चालसे चलते हुए श्यामसुन्दर वेदीके बीचमें आकर खड़े हो जाते हैं।

यहाँ एक महत्त्वपूर्ण बिंदु पर हम ध्यान दें। सम्पूर्ण स्थली में रास वेदी एक ही है - जो यहाँ बीचमें बड़े से गोलाकार के रूप में दर्शायी गयी है। जैस कि उत्सव के आरम्भ में हमने 'केलिकुंज' पुस्तक में से पूज्य बाबा द्वारा लिखित वर्णन सुना था कि गोलोकधाम में यह वेदी बहुत विशाल है - लगभग सौ गज बड़ी। जैसे-जैसे रासलीला का क्रम आगे बढ़ता रहता है, उसी के अनुरूप नृत्य करते-करते श्रीकृष्ण, श्रीराधा और सखियों द्वारा भिन्न-भिन्न नृत्य के आकार धारण किए जाते हैं। पूज्य बाबा ने ऐसे पाँच आकारों के मानचित्र भी लीला में वर्णित किये हैं, यहाँ विराजित अन्य गोलाकार उन्हीं नृत्य के आकारों के प्रतीक हैं।

अब हम दर्शन कर सकते हैं - श्री रासेश्वरी-रसराज अपनी सखियों के साथ **<u>प्रथम मण्डल का आकार</u>** धारण करते हैं ।

रास मंडल रच्यो रसिक हरि राधिका
तरनिजा तीर वानीर कुंजे।
फूले जहाँ नीप नव बकुल कुल मालती
माधुरी मृदुल अलि पुंज गुंजे।।
सुमन के गुच्छ अलि सुच्छ चल बात बल
तरू मनो चहुँ दिसि चँवर करहीं।
करत रव सारि सुक पिक सु-नाना विहँग
नचत केकि अधिक मनहि हरहीं।।

भावार्थ- यमुना के किनारे वेत्र-कुंज में रसिक शिरोमणि श्रीश्यामसुन्दर एवं श्रीराधा ने रास-मण्डल की रचना की है। वहाँ पर कदम्ब, मौलश्री एवं मालती के नये-नये असंख्य पुष्प खिल रहे हैं। उनके माधुर्य से आकृष्ट होकर भौरों के समूह मृदुल गुंजार कर रहे हैं। फूलों के गुच्छों को स्पर्श करता हुआ अत्यन्त निर्मल पवन चल रहा है। उसके प्रभाव से हिलते हुए हरे-हरे वृक्ष ऐसे लग रहे हैं मानो चारों ओर चँवर डुला रहे हैं। मैना, तोता, कोयल तथा और भी अनेक सुन्दर-सुन्दर पक्षी कलरव कर रहे हैं। नृत्य करते हुए मोर चित्त को और भी अधिक खींच लेते हैं।

त्रिगुन जहाँ पवन को गवन नित ही रहत
बहत स्यामल तटनि चल तरंगा।
विविध फूले कमल कोक कलहंस कुल
करत कल कुणित अरू जल विहंगा।।
हेम मंडल रचित खचित नाना रतन
मनहुँ भू करन कुंडल विराजे।
बंस वीनादि मुहचंग मिरदंग वर
सबन मिलि मधुर धुनि एक बाजे।।

भावार्थ: शीतल, मन्द एवं सुगन्धित समीर का वहाँ सदा ही संचार होता रहता है उसकी गति से तरंगे चंचल हो उठती हैं। ऐसी चंचल तरंगों से युक्त श्यामलवर्णा यमुनाजी बहती रहती हैं। यमुनाजी में विविध प्रकार के कमल (जैसे उत्पल कुशेशय, इन्दीवर इत्यादि) खिले हुए हैं तथा चक्रवाक, कलहंसों का समूह एवं अन्य जाति के जल-पक्षी भी मधुर स्वर कर रहे हैं। रास की गोलकार स्वर्ण-वेदी नाना रत्नों से जड़ी हुई है। वह ऐसी लगती है मानो पृथ्वी का कर्ण-कुण्डल हो। बांसुरी एवं वीणादिक तार-यंत्र, मुहचंग और अच्छे-अच्छे मृदंग - ये सभी मिलकर एक स्वर में मधुर ध्वनि उत्पन्न कर रहे हैं।

नचत रस मगन वृषभानुजा गिरिधरन
बदन छवि देखि सुधि जात रति मदन की।
मुकुट की थरहरनि पीत पट फरहरनि
तत्त थेई थेई करनि हरनि सब कदन की।।
दसनि दमकनि हँसनि लसनि अँग-अँग की
अधर वर अरुन लखि उपमा को है।
दृग जलज चलनि ढिग कुटिल अलकनि झुलनि
मनहुँ अलि कुलन की पाँतियाँ सोहै।।

भावार्थ: रस में मग्न होकर राधा-माधव नाच रहे हैं। उनके मुख की शोभा देखकर रति और काम भी बेसुध हो जाते हैं। मुकुट के थरहराने से, पीत पट के फरहराने से तथा ताता-थेइके उच्चारण से जो झाँकी उभरी, वह सारे क्लेशों का निवारण करने वाली है। दाँतों की चमक, मन्द हास्य, प्रत्येक अंग की शोभा तथा मनोहर अधरों की अरुणिमा - इन सबके दर्शन की तुलना में और क्या है? कमलदल से सुन्दर एवं चपल नेत्रों के समीप ही कुंचित केश की लटें ऐसी झूल रही हैं मानो भ्रमरों की पंक्तियाँ सुशोभित हों।

लाग अरु डाट पुनि उरप उरमेइ
तिरप एक एक गति लेत भारी।
करत मिलि गान अति तान बंधान सों
परस्पर रीझि कहैं वार्यो वारी।।
चारु उर हार वर रतन कुंडल ललित
हीर वर वीर स्रवननि सुहाई।
नील पट पीत तन गौर स्यामल मनौ
परस्पर घन अरु दामिनि दुराई।।

भावार्थ: स्नेहपूरित प्रतिस्पर्धा से वे उरप-तिरप आदि एक-एक गति-विशेष को बड़े ही सुन्दर ढंग से प्रदर्शित करते हैं। वे बंधानयुक्त तान लेते हुए परस्पर मिलकर अत्यन्त सुन्दर गा रहे हैं और एक दूसरे पर मुग्ध होकर 'बलिहारी जाऊँ' कह रहे हैं। सुन्दर वक्षःस्थल पर रत्नों का मनोहर हार है और हे सखि! कानों में श्रेष्ठ हीरे के बड़े ही सुन्दर कुण्डल सुशोभित हो रहे हैं। श्री राधिका के गोरे अंगों पर नीला परिधान एवं श्रीकृष्णके श्याम शरीर पर पीताम्बर ऐसे लग रहे हैं मानों एक ओर बादल ने बिजली को अपनी गोद में छिपा लिया है और दूसरी ओर विद्युच्छटाने वारिदमाला को आक्रोडित कर लिया है।

सखी चहुँ दिसि बनी कनक चंपक तनी
चंद वदनी इक एक तें आगरी।
नचत मंडल किए चित्त दुहु तन दिए
भूलि गई सकल अप अपनी सुधि नागरी।।
रमत इहि भाँति नित रसिक सिरमौर दोऊ
संग ललितादि लिए सुघरि सुंदरि अली।
मनसि वृंदावन बसहुँ जीवन धना
व्रजराज सून वृषभानुजू की लली।।

भावार्थ: उन्हें चारों ओर से सोने एवं चम्पा के फूल-जैसे वर्णवाली चन्द्रमुखी सखियाँ घेरे हुए हैं। वे सब शोभा में एक-से-एक बढ़कर हैं। वे परम प्रवीण सखियाँ गोलाकार मण्डल बनाकर नाच रही हैं। उनका चित्त राधामाधव में ऐसा लीन है कि सब अपनी-अपनी सुधि खो बैठी हैं। ललितादिक सखियों को साथ लेकर रसिकों के शिरोभूषण ये दोनों इस प्रकार नित्य ही विहार किया करते हैं। ये सभी सखियाँ चतुर तथा सुन्दर हैं। वृन्दावनदेवजी कहते हैं कि 'हे मेरे जीवनधन ब्रजराज लाडिले एवं वृषभानु लाडिली! तुम दोनों मेरे हृदय-कमल में नित्य ही निवास करो।'

सामने रास वेदी पर हम दर्शन कर सकते हैं - नृत्य का क्रम आगे बढ़ाते हुए अब श्री प्रिया-प्रियतम **<u>दूसरे मण्डल की रचना</u>** करते हैं।

श्रीश्यामसुन्दरके दाहिने हाथ में मुरली है। बायें हाथसे वे श्रीप्रियाके दाहिने कंधेको पकड़े हुए हैं। सर्वत्र आनन्द एवं अनुरागकी धारा बह रही है। इसी समय सबसे प्रथम श्रीश्यामसुन्दर मुरली में सुर भरते हैं। उनके सुर भरते ही वाद्य-यन्त्र बजानेवाली मञ्जरियाँ भी एक साथ ही श्यामसुन्दर के सुरमें सुर मिलाकर वाद्य बजाना प्रारम्भ करती हैं। मुरली एवं वाद्य यन्त्रोंकी मधुरिमासे पुलिन रसमय बन जाता है। श्यामसुन्दर सुर भरकर रुक जाते हैं। उनके रुकते ही सब वाद्य-यन्त्र भी तत्क्षण रुक जाते हैं। वे दो-तीन क्षणके लिये रुकते हैं। उस रुकनेके क्षणमें सखियाँ, मञ्जरियाँ एवं दासियाँ - सभी मिलकर एक साथ ही अपने एक पैरको ऐसी चतुराई एवं विलक्षण रीतिसे किंचित् हिला देती हैं जिससे घुँघरू एक साथ एक स्वर में बज उठते हैं तथा उनका अनिर्वचनीय मधुरिम स्वर समस्त पुलिनपर बिखर जाता है। यह ध्वनि सर्वत्र गूंजने लग जाती है। ऐसा प्रतीत होता है मानो यमुनाके प्रवाहके अन्तरालमें, बालुका-कणोंके हृदयमें, पुष्प-वृक्षोंके अन्तरतममें, सर्वत्र घुँघरू बज रहे हों। घुँघरूकी ध्वनि बंद होते ही दूसरे क्षण फिर वही मुरली का मधुरतम स्वर और वाद्य-यन्त्रोंका सुन्दरतम स्वर गूंजने लगता है। इस प्रकार घुँघरू एवं मुरली तथा वाद्ययन्त्रोंकी ध्वनि क्रमशः गूँजती है। प्रत्येक बार स्वरका तार पहलेकी अपेक्षा दीर्घ होता जा रहा है, अर्थात् उत्तरोत्तर अधिक समयके लिये स्वरकी गति चालू रखी जाती है। अब वाद्य यन्त्रों की मधुरिमाके साथ ही सभी सखियाँ, मञ्जरियाँ, सब अत्यन्त मधुर स्वर में गाने लगती हैं।

बन्यौ मोर मुकुट नटवर बपु स्याम सुंदर कमल नैन
बाँकी भौंह ललित भाल घूँघरवारी अलकें।
पीत बसन मोती माल हिये पदिक कंठ लाल
हँसनि बोलनि गावनि गंडन स्रवन कुंडल झलकें।।
कर पद भूषन अनूप कोटि मदन मोहन रूप
अद्भुत बदन चंद देख गोपी भूली पलकें।
कहें भगवान् हित राम राय प्रभु ठाढ़े रास मंडल मधि
राधा सों बाँह जोटी कियें हिये प्रेम ललकें।।

भावार्थ: हे सखी, देखो! आज श्री श्यामसुंदर ने कैसा सुंदर नटवर वेष धारण किया है! सिर पर मोरमुकुट, साँवला सलोना शरीर, कमल के समान सुंदर नेत्र, तिरछी चितवन और ललाट पर लहराती घुँघराली अलकें उनके रूप को और भी मोहक बना रही हैं। पीतांबर धारण किए हुए श्रीकृष्ण के हृदय पर मोतियों की माला और गले में सुंदर आभूषण सुशोभित हैं। उनके कानों के कुंडल झिलमिला रहे हैं, मुस्कान अत्यंत मधुर है और वाणी तथा गायन में ऐसा माधुर्य है कि मन सहज ही उनकी ओर खिंचा चला जाता है। उनके हाथों और चरणों के आभूषण भी अनुपम हैं और उनका चंद्रमा के समान सुंदर मुख करोड़ों कामदेवों को भी लज्जित करने वाला है। उनके इस अद्भुत रूप को देखकर गोपियाँ इतनी मुग्ध हो जाती हैं कि पलकें झपकाना तक भूल जाती हैं। ऐसे मनमोहन श्रीकृष्ण रासमंडल के मध्य राधारानी के साथ खड़े हैं और उन्हें अपनी बाँहों में लेकर प्रेम से आलिंगनबद्ध किए हुए हैं। उनके हृदय में राधारानी के प्रति प्रेम की गहन लालसा उमड़ रही है।

श्रीप्रिया एवं सखियाँ एक साथ ही स्वरके क्षणिक लय एवं सामयिक परिवर्तनके अवसरपर 'तत-थेई थेई, तत-थेई थेई' आदि शब्दोंको इतने मधुरतम स्वर में उच्चारण करती हैं कि वेदीकी समस्त दर्शक मण्डली आनन्दमें विभोर होकर भावके वेगको संभाल नहीं पाती और तद्भावाविष्ट होकर 'थेई थेई' उच्च स्वरसे बोल उठती है।

निर्तत राधा कमल कर लीने।
थेई-थेई उचरत जबही निरखत पिय दृग दीने ।।
लाही अँगिया अधिक बनी उर और बसन रंग भीने ।
चितै-चितै मुसिकत प्रीतम तन गावत राग नवीने ।।
नैन बैन कर पग चंचल पर वारौं खंजन कोकिला मीनें।
जय "श्री कमल नैन" हित रीझि उर लावत निपट बिबस आधीने ।।

भावार्थ: हे सखी! श्रीराधा रानी हाथों में कमल लेकर अत्यंत मनोहर रीति से नृत्य कर रही हैं। उनके नृत्य की लय के साथ जब वे 'थेई-थेई' के मधुर बोल उच्चारित करती हैं, तो श्रीकृष्ण के नेत्र सहसा उनकी ओर उठ जाते हैं और एकाएक उन्हीं पर ठहर जाते हैं। मानो उन मधुर बोलों ने प्रियतम का ध्यान अपनी ओर खींच लिया हो और उनकी चितवन श्रीराधा रानी के रूप-माधुर्य में बँधकर रह गई हो। श्रीराधा रानी ने अपने वक्षस्थल पर लाक्षारुण रंग की सुंदर अँगिया (लाख जैसा लाल रंग) धारण कर रखी है और उनके वस्त्र प्रेम तथा आनंद के रंग में भीगे हुए प्रतीत होते हैं। वे बार-बार चितवन से अपने प्रियतम श्रीकृष्ण को निहारती हैं और मंद-मंद मुस्कुराते हुए नए-नए राग छेड़ती हैं। उनकी चितवन में प्रेम की चंचलता, मुस्कान में मधुर आमंत्रण और गायन में ऐसा माधुर्य है कि श्रीकृष्ण का मन उनके रूप और प्रेम में बँधता चला जाता है। उनके चंचल नयन, मधुर वाणी और नृत्य करते हुए चपल चरण इतने मनोहर हैं कि उनके सम्मुख खंजन पक्षियों की चंचलता, कोयल की मधुर कूक और मछलियों की सुंदर गति भी न्योछावर की जा सकती है। प्रकृति की समस्त सुंदरताएँ मानो श्रीराधा रानी के अनुपम सौंदर्य के सम्मुख अपनी छटा खो देती हैं। श्रीकमलनयनजी कहते हैं कि श्रीराधा रानी के प्रेम और रूप-माधुर्य पर रीझकर श्रीकृष्ण उन्हें अपने हृदय से लगा लेते हैं। प्रेम के इस मधुर आवेग में वे स्वयं को पूर्णतः भूल जाते हैं और श्रीराधा रानी के प्रेमाधीन होकर उनके आलिंगन में बँध जाते हैं। मानो इस अलौकिक प्रेम-लीला में स्वयं श्रीकृष्ण भी अपनी प्रियतमा के प्रेम के वशीभूत हो गए हों।

सामने हम दर्शन करें - अब रास मण्डली आगे बढ़कर **<u>तीसरे मण्डल का आकार</u>** धारण करती है।

गीत समाप्त होनेपर दो-तीन क्षण सर्वत्र नीरवता छा जाती है। फिर तुरंत ही श्रीप्रिया अपने घुँघरुओं को बजा देती हैं। उनके ऐसा करते ही घुँघरु एवं वाद्य-यन्त्र एक साथ बज उठते हैं। इस बार विश्वमोहन नृत्य प्रारम्भ होता है। जो मण्डली श्रीप्रिया-प्रियतम एवं ललिता-विशाखा-चित्राको घेरकर गोलाकार खड़ी थी, अपने पैरोंको उठाती-गिराती हुई घूमने लगती है, तथा श्रीप्रिया-प्रियतम एवं ललिता-विशाखा-चित्रा अपने स्थानपर ही उसी प्रकार अपने पैरोंको नचाती हुई घूमने लगती हैं। नृत्य मण्डलीकी गति पूर्वसे पश्चिमकी ओर है। इसी समय श्यामसुन्दर, जितनी सखियाँ हैं, उतने रूपोंमें प्रकट होकर प्रत्येकके बीच में खड़े हो जाते हैं तथा सबका हाथ पकड़कर नृत्य करते हैं। अब सखी-श्यामसुन्दर, सखी-श्यामसुन्दर, सखी-श्यामसुन्दर, सखी-श्यामसुन्दरकी जोड़ी हाथोंसे हाथ मिलाये हुए नृत्य कर रही है। अब नृत्यकी गति तीव्र हो जाती है तथा उसी नृत्यके स्वरमें स्वर मिलाकर मञ्जरियोंके सभी दल मधुर कण्ठसे गाने उगते हैं-

रास विलास गहे कर पल्लव एक एक भुज ग्रीवा मेली ।।
द्वै द्वै गोपी बिच बिच माधो निर्तत संग सहेली ।।1।।
टूट परी मोतिन की माला ढूंढत फिरत सकल ग्वारी।
विगलित कुसुम माल कच विलुलित निरखि हँसे गिरवरधारी ।।2।।
शरद विमल नभ चंद बिराजे निर्तत नन्द किशोरा ।
परमानन्द प्रभु वदन सुधा निधि गोपी नयन चकोरा ।।3।।

भावार्थ: हे सखी! देखो, श्रीकृष्ण गोपियों के साथ कैसी मनमोहक रासलीला कर रहे हैं! श्रीश्यामसुंदर ने अपनी कोमल भुजाओं से एक-एक गोपी का हाथ थाम रखा है और किसी के गले में बाँह डाल रखी है। दो-दो गोपियों के बीच में श्रीमाधव स्वयं नृत्य कर रहे हैं। चारों ओर उनकी सखियाँ हैं और सब मिलकर प्रेम

तथा आनंद में मग्न होकर नृत्य कर रही हैं। नृत्य करते-करते गोपियों की मोतियों की मालाएँ टूटकर बिखर गई हैं। सभी ग्वालिनें धरती पर बिखरे मोतियों को ढूँढ़ने में लग गई हैं। किसी की फूलों की माला ढीली होकर लटक गई है, तो किसी के केश बिखर गए हैं। गोपियों की यह दशा देखकर गिरिराजधारी श्रीकृष्ण मंद-मंद मुस्कुराने लगे हैं। हे सखी! देखो, शरद ऋतु का निर्मल आकाश है और उसमें चंद्रमा अपनी शीतल चाँदनी बिखेर रहा है। ऐसे सुंदर वातावरण में नंदनंदन श्रीकृष्ण अपनी मधुर छवि से सबको मोहित करते हुए नृत्य कर रहे हैं। परमानन्द दासजी कहते हैं कि श्रीकृष्ण के मुखकमल से अमृत के समान माधुर्य बरस रहा है और गोपियाँ चकोर पक्षियों की भाँति अपने नेत्रों से उस मुखचंद्र का रसपान कर रही हैं।

आज गोपाल रास रस खेलत पुलिन कल्पतरु तीर री सजनी।
सरद विमल नभ चंद विराजत रोचक त्रिविध समीर री सजनी।।
चम्पक बकुल मालती मुकुलित मत्त मुदित पिक-कीर री सजनी।
लेत सुधंग राग रंग नीको ब्रज जुबतिन की भीर री सजनी।।
मघवा मुदित निसान बजायौ व्रत छाँडयौं मुनि धीर री सजनी।
हित हरिवंश मगन मन स्यामा हरत मदन मन पीर री सजनी।।

भावार्थ: हे सखि! आज यमुनाके पुलिनवर्ती कल्पवृक्षोंके समीप गोपाल श्रीश्यामसुन्दर रासकी रसमयी क्रीड़ामें निमग्न हैं। शरदके स्वच्छ आकाशमें चन्द्रमा सुशोभित है तथा हृदयको आह्लादित करनेवाला शीतल, मन्द एवं सुगन्धित पवन चल रहा है। चम्पा, मौलश्री और मालती आदि के पुष्प खिले हुए हैं। कोकिल एवं शुक आनन्दमें डूबे हुए मतवाले हो रहे हैं। वहाँ युथ-की-युथ ब्रजबालाएँ शुद्ध स्वरूपमें राग-रागिनियोंका आलाप ले रही हैं। आकाशमें इन्द्रने भी आनन्दित होकर नगाड़े बजाये। इस महान् उत्सवसे आकर्षित होकर धैर्यवान् मुनियोंने भी अपने संयम-नियमादिकको बहा दिया। श्रीहितहरिवंशजी कहते हैं कि उल्लासमें भरकर श्रीराधा प्रियतम श्रीश्यामसुन्दरकी अत्यन्त प्रीति-जनित अनन्त गम्भीर व्याकुलताको प्रशमित कर रही हैं।

राधा कृष्ण मनोहर जोरी, नन्द नन्दन वृषभानु किशोरी।

आजु रस रास रच्यौ पिय प्यारी।
फूलि रह्यौ वृंदावन चहुँ दिसि सरद निसा उजियारी।।
कुँवरि प्रबीन सकल गुन आगरि तैसेइ लाल बिहारी।
हिय हुलास हरखत सुख बरखत आनँद मगन महा री।।
प्रीतम के कर तें लै स्यामा मुरली अधरनि धारी।
नइ इक भाँति बजाइ रिझाये होत लाल बलिहारी।।
ललना लाल नेह नव रंगी निरतत कला बिस्तारी।
वृन्दावन हित रूप नागरी नागर सब सुखकारी।।

भावार्थ: हे सखी, देखो! आज श्रीश्यामसुंदर और प्यारी श्रीराधा रानी ने वृंदावन में कैसा सुंदर रास रचाया है! शरद ऋतु की उज्ज्वल चाँदनी से चारों दिशाएँ खिल उठी हैं और समस्त वृंदावन आनंद से भर गया है। श्रीराधा रानी सभी कलाओं में निपुण और समस्त गुणों की खान हैं, तो श्रीलाल बिहारी भी उन्हीं के समान कला-कौशल में अद्भुत हैं। दोनों के हृदय में प्रेम का उल्लास उमड़ रहा है, वे एक-दूसरे के आनंद को बढ़ाते हुए परम सुख में मग्न हैं। देखो सखी! रास के बीच श्रीराधा रानी अपने प्रियतम श्रीकृष्ण के हाथों से मुरली लेकर अपने अधरों पर धारण कर लेती हैं और उसे एक नए ही ढंग से बजाकर अपने प्रियतम को रिझाने लगती हैं। श्रीश्यामसुंदर भी अपनी प्रिया की इस अनोखी कला पर बलिहारी जाते हैं। दोनों प्रेम के नए-नए रंगों में रंगकर नृत्य की अद्भुत कलाओं का विस्तार कर रहे हैं। श्रीराधा-कृष्ण का यह दिव्य प्रेम नित्य-नूतन है और वे अपनी अद्भुत नृत्य-कला से इस प्रेम का चारों दिशाओं में विस्तार कर रहे है। श्री हित वृंदावनजी कहते हैं कि नागरी श्रीराधा रानी और उनके प्रियतम श्रीकृष्ण अपने प्रेम और माधुर्य से सबको सुख प्रदान कर रहे हैं।

निरतत राधा नंद-किसोर।
ताल-मृदँग सहचरी बजावत, बिच मोहन मुरली कल घोर।।
उरप-तिरप पग धरत धरनि पर, मंडल फिरत भुजनि भुज जोर।
सोभा अमित बिलोकि गदाधर रीझि-रीझि डारत तृन तोर।।

भावार्थ: हे सखी, देखो! श्रीराधा रानी और नंदनंदन श्रीकृष्ण कैसा सुंदर रास नृत्य कर रहे हैं! सखियाँ ताल और मृदंग बजाकर इस दिव्य रासलीला में मधुर संगीत भर रही हैं और बीच में श्रीकृष्ण की मुरली की मधुर ध्वनि गूँज रही है। श्रीराधा-कृष्ण उरप-तिरप गति के साथ धरती पर चरण रखते जा रहे हैं। दोनों एक-दूसरे की भुजाओं में भुजाएँ डाले हुए रासमंडल में घूम-घूमकर नृत्य कर रहे हैं। उनके इस अलौकिक रूप, एवं अपार शोभा को देखकर गदाधरजी मुग्ध हो जाते हैं। वे प्रेम और आनंद में इतने विभोर हो उठते हैं कि रीझ-रीझकर तृण तोड़ने लगते हैं।

रास में नागरी रंग बरषावै।
जो गति लेत लाल मुरली सौं नूपुर कुँवरि बजावै।।
अहा-अहा प्रीतम मुख बानी फेरि लेहु यह भावै।
विद्या अखिल स्वामिनी राधा गति नौतन उपजावै।।
बहुरि अलाप सप्त सुर लैकें प्रिया ललकि सौं गावै।
वृन्दावन हित रूप रीझि कैं नागर ग्रीव डुलावै।।

भावार्थ: हे सखी, देखो! रास में श्री नागरी श्रीराधा रानी अपने प्रेम और माधुर्य से रंग बरसा रही हैं। श्रीकृष्ण बाँसुरी में जैसी तान कि गति लेते हैं, उसी गति के साथ श्रीराधा रानी अपने नूपुरों को बजाकर रास में अद्भुत रस उत्पन्न कर रही हैं। श्री राधा कहती जा रही हैं, "अहा! अहा! प्रीतम, फिर से वही मधुर तान सुनाओ, यह मुझे बहुत प्रिय लगती है।" समस्त विद्याओं की स्वामिनी श्रीराधा रानी अपने नृत्य में नित-नए भाव और अद्भुत गतियाँ उत्पन्न करती हैं। फिर वे सातों स्वरों को लेकर सुमधुर गायन करने लगती हैं। श्री हित वृंदावनजी कहते हैं कि श्रीराधा रानी के इस अनुपम रूप, नृत्य और गायन पर रीझकर श्रीकृष्ण प्रेम से अपनी गर्दन हिलाने लगते हैं।

नृत्यकी गति और भी तीव्रतर होती है तथा मञ्जरियोंका दल इसी पदको नृत्यके स्वर में स्वर मिलाकर गाता है। इस बार सखियों और श्यामसुन्दर परस्परका हाथ छोड़कर अपने-अपने दोनों हाथोंसे भाव बताना प्रारम्भ करते हैं। समस्त सखियोंके समस्त अङ्ग नृत्यके चढ़ाव-उतार के साथ विचित्र-विचित्र भङ्गिमाका प्रकाश करते हुए सबको आश्चर्य में डाल रहे हैं। नृत्यके समय अंगोंको झुकाने, मोड़ने आदिके ढंगको देखनेपर ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो इन सखियोंके अङ्गोंमें अस्थि-संस्थान है ही नहीं और इनके अंग सर्वथा सुन्दरतम सुकोमल माँससे निर्मित हैं, जो इच्छानुसार सब ओर सभी स्थानोंसे मुढ़ जा सकते हैं। नृत्य करते-करते सखियोंका अञ्चल सिरसे सरक जाता है। श्यामसुन्दर बड़ी सावधानीसे उनके अञ्चलको बीच-बोचमें ठीक कर देते हैं। अब नृत्यके आवेशमें श्रीप्रिया एवं ललित्ता आदि भी बेसुध होने लगती हैं। बीचमें भी एक मण्डल बन गया है, जिसमें ललिता-श्यामसुन्दर, प्रिया-श्यामसुन्दर, विशाखा-श्यामसुन्दर, ये छः हैं।

सामने श्रीरासवेदी पर देखें - यहाँ श्री प्रिया-प्रियतम और सखियाँ नृत्य करते हुए **चौथे मण्डल का आकार** धारण करते हैं।

आज गोपाल लिये ब्रजबाल तो रास रच्यो वंसीवट ठैया।
बेनु पखावज बाँसुरी की धुनें आनन्द सिंधु बहयो तीहि ठैया।।
भाव उठ्यो हिय राधिका के मोर बने नन्दराई को छैया।
उर अंतरजामि हिय की हरी तहाँ आये गयो बनी मोर कन्हैया।।

भावार्थ: श्रीकृष्ण ब्रजबालाओं को साथ लेकर वंशीवट में रास रचा रहे हैं। वीणा, पखावज तथा बांसुरी की धुनों से उस स्थान पर आनन्द का समुद्र बह रहा है। श्रीराधा के मन में यह भाव उठा कि नन्दजी के पुत्र(श्रीकृष्ण) मोर का रूप धारण करें। सबके हृदय की जानने वाले भगवान श्रीकृष्ण मोर बनकर वहाँ आ गये।

सेवती चमेली बेली मालती निवारी कुंद
खिल रहे फूल खिली चाँदनी हूँ चंद की
नुपूर सितार वेणु बाँसुरी मृदंग बाजे
नृत्यति गोपाल तीर तनिया कलिंद की
नाच उठे मोर, चारों ओर सौं प्रकाश देखि
कमलन पै नाच रही अवली अलिवृन्द की
आगे गति नार एक केसर में नाच रही
बेसर में नाच रही मूरत गोविन्द की

भावार्थ: कुंजों में सफेद चमेली, बेलि, मालती तथा कुंद की लतायें खिली हैं जिनपर चन्द्रमा की खिली चाँदनी छिटक रही है। नूपुर, सितार, वीणा, बाँसुरी तथा मृदंग बज रहे हैं। यमुना जी के तटपर श्री गोपाल नृत्य कर रहे हैं। चारों ओर उस दिव्य प्रकाश को देखकर एक ओर मोर नाच उठे तो दूसरी ओर खिले हुए कमलों पर भवरों की पंक्ति नृत्य करने लगीं। उन सभी को पीछे छोड़ते हुए एक सखी तेज़ गति लिए नृत्य कर रही है और साथ ही उसके बेसर में श्यामसुन्दर की मूर्ति नाचती हुई झलक रही है।

लै फिरकी खिड़की ते गिरी। सखी आए गयो मोय प्रेम तमारो।।
मोहन नैन के बान लगे। मुरझाइ परी कोई आए सम्हारो।।
वीर सरीर की यह गत है गई। वैद मिले मोय नंददुलारौ
खोल री घूँघट खोलूँ कहा, बसो आँखिन मोर की पाखन वारो

भावार्थ: तेज़ गति से नृत्य करती हुई वह गोपी खिड़की से फिरकी की तरह गिर गई। अपनी दशा बताते हुए सखी कहती है, ''हे सखी ! मुझे प्रेम रूपी बुखार ने आ घेरा है। मोहन के नयन रूपी बाणों से बिंधकर मैं मुरझाकर गिर पड़ी हूँ, कोई आकर मुझे सम्हालें। अरी सखी ! मेरे शरीर की क्या गति हो गई है। नंद के दुलारे ही मेरे वैद्य हैं - वे शीघ्र मुझे कब मिलेंगे।' दूसरी सखी कहती हैं, ''शीघ्र घूँघट खोल और दर्शन कर ले।'' पहली सखी हँस के पुनः कहती है, ''हे सखी ! घूँघट क्यों खोलूँ? मेरे नयनों में मोर का पँख धारण किये हुए श्याम सुन्दर जो नित्य बसे हुए हैं!''

नाचत बलभद्र वीर संग लिये युवती भीर, रासरच्यो दिव्य तीर तनिया कलिंद की
नाच उठी यमुन लहर चंद चाँदनी को पहर, पीत पटि लहर-लहर नाची नंदनन्द की
नचे बाल तालन पै श्रम बिंदु भालन पै, सजी कमल मालन पै अवली अलि वृन्द की
राधा रँग राच रही पलक खोल जाँच रही, नैनन में नाच रही मूरति गोविन्द की।

भावार्थ: बलरामजी के भाई श्रीकृष्ण युवितयों की भीड़ को लेकर यमुनाजी के दिव्य तट पर नृत्य कर रहे हैं। वहाँ यमुनाजी की लहरें चमकती चाँदनी में नाच उठी हैं, तो यहाँ श्री कृष्ण का पीताम्बर भी (उसी प्रकार दमकता हुआ) लहरा रहा है। सभी ब्रजबालाऐं संगीत की ताल पर नृत्य कर रही हैं, जिससे उनके मस्तक पर श्रम बिन्दु झलक रहे हैं। समस्त सखी मण्डल के वक्षःस्थल पर कमलों की मालाएं सजी हुई हैं जिसपर भौरों की पंक्तियाँ मँडरा रही हैं। प्रेम में रची (डूबी) हुई श्री राधारानी इस दृश्य को पलक खोलकर निहारती हुई प्रतीत हो रही है परंतु (वास्तव में अंदर-

ही-अंदर) उनकी आँखों में श्री गोविंदकी मूर्ति ही नृत्य कर रही है।

नंदलाला बन्सी वाला रे।
बसिया कैसी बजाई गईए रे
फिर बजाओ बांसुरी मैं वारी बंसी वारे
जाते सुनत नींद नहीं रैन गिनत तारे
मोहि लई सब ब्रजनारी मैं वारी प्यारे
सुन छैया, कन्हैया, मनभैया, हरजैया रे
सुनत बंसी सुधि-बुध बिसरी, लोक लाज कुल की सगरी
सुन कान्हा मनमाना जगजाना पहचाना रे।

भावार्थ: हे सखी, नंद के लाल ने कैसी सुंदर बाँसुरी बजाई है! हे बाँसुरीवाले! जिस बाँसुरी की ध्वनि से हमारी रातों की नींद उड़ गई है और सारी निशा हम बस बैठकर तारावली गिनती रहती हैं, हम विनती करती हैं, हमें फिर से वह बाँसुरी सुनाओ। हमारे मन की आशाओं को तोड़ने वाले कन्हैया! आपने समस्त ब्रज की नारियों का मन हर लिया है। आपकी वंशी ध्वनि को सुनकर हम लोक-लज्जा की सारी स्मृति भूल गई हैं। सुनो कान्हा, आपकी मनमानी को सारा जग पहचान चुका है।

इसके पश्चात श्री रास मण्डल नृत्य करते-करते अब **<u>पाँचवे मण्डल की रचना</u>** करता है ।

श्री प्रिया-प्रियतम भिन्न-भिन्न भाव-लहरियों में अवगाहन करते रहते हैं, उन भावों से परिचालित होकर उनके अंग-प्रत्यंग स्वतः ही भिन्न-भिन्न नृत्य की मुद्राओं को दर्शाने लगते हैं, और उनके संकेत के अनुसार सखियाँ भी उन भावों और मुद्राओं के अनुरुप पदों का चयन करते हुए अपने मधुर गायन द्वारा श्री युगल को आनंदित करती रहती हैं। लीला जगत की विलक्षणता है कि काल भी लीला के आधीन होकर चलता है। लीला काल के आधीन सर्वथा नहीं है। ऐसे में यह दिव्य रास-नृत्य कब तक चला, यह कौन कह सकता है। अपितु यह तो आज भी, अभी भी निरन्तर चल रहा है।

कबतक चलता वह नृत्य अहो! कैसे बतलाऊँ मैं, प्रियतम!
आँखों में है अब तक पूरित हल्लीसक मुद्राएँ, प्रियतम!
शशधर है ठीक मध्य नभमें वैसे ही गति भूले, प्रियतम!
वे मुग्ध देखते हैं साँवर, बाला है नाच रही, प्रियतम!

भावार्थ - यह नृत्य कब तक चला अहो! मैं कैसे बतलाऊँ? अभी तक आँखों में हल्लीसक मुद्राएँ ज्यों-की-त्यों परिपूतिरत हें। निर्मल मध्य नभ के बीच में चन्द्रमा गति-भूले वैसे ही अवस्थित हैं। मुग्ध होकर सब देख रहे हैं, सबकी आँखें केन्द्रित हैं - गौर-नीलदम्पति के मनोहर नृत्य पर।

वैसे ही कटि झुक जाती है बालाकी पल-पल में, प्रियतम!
अम्बर वक्षःस्थलका भी वह, वैसे ही चंचल है, प्रियतम!
वे कुण्डल भी वैसे ही हैं, हो रहे चपल दोनों, प्रियतम!
आनन-सरोजपर वैसे ही प्रस्वेद कणावलि है, प्रियतम!

भावार्थ - पल-पल में राधा किशोरी की कटि उस भाँति ही झुक जाती है। वक्षस्थल का अञ्चल भी वैसे ही चञ्चल हो रहा है। दोनों कर्णकुण्डल भी वैसे ही चञ्चल हो रहे हैं, और मुख कमल पर वैसे ही प्रस्वेदकण झलमला रहे हैं।

गिर रहे फूल वैसे ही हैं झर-झरकर अलकों से, प्रियतम!
साँवर अपने दुकूलमें हैं कर रहे चयन उनको, प्रियतम!
वैसे ही नाच-नाच करके साँवर भी, बालाकी, प्रियतम!
कर रहे सरस अनुमोदन हैं उन नृत्य-भंगियों का, प्रियतम!

भावार्थ - अलकों से सुमन झर-झरकर वैसे ही रासस्थल को विभूषित कर रहे हैं। नील सुन्दर अपने पटके में उन सुमनों को चयन करते जा रहे हैं। उस भाँति ही नाच-नाचकर साँवर भी बाला की नृत्यभङ्गिमा का सरस अनुमोदन कर रहे हैं।

रसमय तंत्रोंके तार सभी वैसे ही झंकृत हैं, प्रियतम!
वैसे ही नूपुरका रुन-झुन सहयोग दे रहा है, प्रियतम!
वैसे ही तालबध भी है पल-पल नवीन होता, प्रियतम!
वैसे ही बज उठती है वह साँवरकी करताली, प्रियतम!

भावार्थ - रसमय तंत्रों के तार वैसे ही झंकृत हो रहे हैं। नूपुर का रुनझुन शब्द वैसे ही सहयोग दे रहा है। ताल की रचनाएँ उस भाँति ही पल-पल में नवीन होती जा रही है, और वैसे ही रह-रहकर नीलसुन्दर की हाथों से ताली भी बज उठती हैं। अस्तु।

इसपर मैं किंतु सरस झीना आवरण डालकर ही, प्रियतम!
आगे चलती हूँ बालाको, साँवर को ले दृगमें, प्रियतम!
उस ओर नृत्य उन दोनों का अविराम चल रहा हैं, प्रियतम!
वे उधर उसी क्षण हैं निकुञ्ज पथमें भी चल पड़ते, प्रियतम!

भावार्थ - इस पर मैं एक सरस झीना परदा डालकर ही आगे चल रही हूँ। साँवर को, राधाकिशोरी को अपनी आँखों में लिये हुए ही आगे बढ़ रही हूँ। उस ओर उन दोनों का नृत्य भी बिना विराम चल ही रहा है। साथ ही उधर देखो! उसी क्षण वे निकुञ्जपथ में भी चल पड़े हैं।

नृत्य करते-करते, और सब को रस-दान करते-करते श्री प्रिया-प्रियतम अब कुछ श्रमित से हो रहे हैं। यह देखकर सब सखियाँ-मंजरियाँ एकजुट होकर उनका श्रम दूर करने की चेष्टा करती हैं। कोई अपने आँचल से उनके श्रमबिंदुओं को पोंछ देती है, कोई उनको सुवासित शीतल जल प्रस्तुत करती है, कभी उनको पंखा झलकर, कभी तृण तोड़कर उनकी नज़र उतारकर, कभी उनको सुस्वादु व्यंजन पवाकर - इस प्रकार भिन्न-भिन्न सेवाओं और उपायों से वे सब मिलकर श्री प्रिया-प्रियतम को रिझाने में लग जाती हैं।

रास करि बैठे दोऊ पवन करति कोऊ
लै-लै अंचल सौं पौंछें स्रम वारि री।
करति प्रसंस कोऊ प्रेम भींजिं रहीं कोऊ
कोऊ रही रीझि विवि बदन निहारि री।।
कोऊ पुहुपांजुलि वारें कोऊ तृन तोरि डारें
कोऊ जल पीबत हैं बार बार वारि री।
कोऊ रीझि गावनि पै कोऊ रीझि निर्तनि पै
वृन्दावन हित रूप करैं मनुहारि री।।

भावार्थ - अद्भुत रास करके श्रीप्रिया-प्रियतम सुन्दर सिंहासन पर आसीन है। उनको विश्राम देने हेतु कोई सखी उन्हें पंखा डुलाने लगती है और कोई अपने आंचल से उनके श्रम बिन्दु पौंछने लगती है। एक सखी उनकी प्रशंसा करती है तो दूसरी सखि उनके प्रेम में डूबती जा रही है। कोई सखी पुष्पांजलि छोड़ती है, कोई तृण तोड़ती है, कोई जल पीकर उनपर बारमबार वारने लगती है। कोई गाने पर, कोई नृत्य पर रीझ रही है। वृन्दावनदासजी कहते हैं कि कोई सखी दोनों को लाड़ करने में व्यस्त है।

सुस्वादु व्यंजन और सुवासित जल पाते-पाते श्री प्रिया-प्रियतम और भी गहन भाव में अवगाहन करने लगते हैं। पूरे वातावरण में एक शीतल नीरवता छा जाती है। बैठे-बैठे श्रीकिशोरीजी की पलकें अपने आप ही गिरने लगती हैं। उनकी यह दशा देखकर सखियाँ समझ जाती हैं कि वे अब शयन करना चाहती हैं। श्रीप्रिया-प्रियतम का शयन और कुछ नहीं, उनकी परम-पावन, परम गहन महाभाव की दशा है, जिसमें डूबकर वे प्रत्येक जीव के अंतःकरण में रस का संचार करते रहते हैं। अतः

कुछ सखियाँ शीघ्रातिशीघ्र शयन कक्ष की ओर बढ़कर वहाँ की सब तैयारियाँ करने में लग जाती हैं, और अन्य सखियाँ श्रीप्रिया-प्रियतम को शयनकक्ष की ओर हौले-हौले पधारने के लिए प्रार्थना करने लगती हैं।

वारति अलि मृगनैंनी आरति ।
निज सहचरि इच्छा अनुसारनि समझि सैंन की सैना बैंनी ।।
जगमग जोति जगति दीपावलि कनक थार मधि सचित सुचैंनी ।
श्रीहरिप्रिया हितवाय हियनि में लै बलाय सनमुख सुख दैंनी ।।

भावार्थ - मृगनैनी सखी श्रीप्रिया-प्रियतम की आरती उतार रही है। अपनी सखी की आँखों का निद्रापूर्ण संकेत समझ रही है। सुन्दर सजी हुई सोने की थाली के मध्य में आरती का दीपक दीपावली की ज्योति की भाँति जगमगा रहा है।

लड़ैती जू के नैननि नींद घुरी ।
आलस-बस, जोबन बस, मद-बस, पिय के अंक ढुरी ।।
पिय कर परस्यौ सहज चिबुक सौ औचक चैकि परी ।
बावरी सखी 'हित व्यास' सुवन बल देखत लतन दुरी ।।

भावार्थ - श्री लाड़लीजू के नयनों में नींद भरी हुई है। आलस, यौवन और मद के नशे में मग्न होकर वे प्रियतम की गोद में लुढ़क गईं। श्री श्यामसुन्दर ने हलके से जब उनकी ठोड़ी का स्पर्श किया तब किशोरी अचानक चौंक के उठ गईं। हित व्यास जी कहते हैं कि बावरी सखी इस सारे दृश्य को फूलों की लताओं में छिपकर देख रही हैं।

सुनो प्यारी हो कुँवरि राधे, निकुंजन पौढ़िये सकुमार ।
भलो रस हो रास में आज, रह्यौ तुम्हरी कृपा अनुसार ।।
रैन अबहो बहुत थोरी रह्यो तजि केलि चतुर सुजान ।
रसिक प्रीतम सदा मेरो हा-हा हँसि कहो कृपानिधान ।।

भावार्थ - एक सखी कहती हैं - 'हे राधाकिशोरी! प्रियतम सहित निकुंज में शयन करने की कृपा करें। आज आपकी कृपा से रास में अत्यन्त सुन्दर रस का प्रवाह बहा है। रात्रि अब बहुत थोड़ी रह गई है। इसलिए, हे चतुर, हे सुजान, रास केलि को छोड़ दीजिए। कवि रसिक जी कहते हैं के सखी अपने निज प्रियतम श्रीकृष्ण से प्रार्थना करती हैं कि वे भी प्रसन्नतापूर्वक निकुंज में पधारने कि सहमति प्रदान करें।

आनन्द रहो ब्रज चंद्र दोऊ शुभ सगुन सदा तुमको आवें।
नित ही रस केलि करो मिलिके हम निरखि निरखि अतिशय सुख पावैं।।
यह धन हमसे रंकन को मिल्यो हम कहा लौं विधाता के गुण गावें।
नारायण आशीष करें हम तुमहूँ पौढ़ो हमहूँ जावे।।

भावार्थ - सखियाँ गाती हैं - हे श्रीयुगल! आप सदा आनन्दित रहें, सभी शुभ शगुन आप पर ही आयें। आप नित्य ही रस केलि करते रहें, एवं हम देख-देख कर आनन्दित होते रहें। यह धन (आपकी सेवा) हम जैसे दरिद्रों को मिला, इसके लिये हम कहाँ तक विधाता के गुण गायें। नारायणदास जी कहते हैं कि सखियाँ आशीष देती हुई विनती करती हैं कि आप भी शयन करें और हम भी आपको एकान्त में छोड़ दें।

कुंज पधारौ राधे! रँग भरी रैन ।
रँगभरी दुलहिन, रंग भरे पिया स्यामसुन्दर सुख दैन ।।
रँगभरी सयनी बिछीय सेज पर, रँग भर्यौ उलहत मैन ।
रसिक बिहारि पिय प्यारी दोऊ मिल, करौ सेज सुख सैन ।।

भावार्थ - कुँज पधारो राधे, आनन्द भरी रात्रि हो। एक ओर प्रेम भरी दुलहन है, दूसरी ओर प्रेम से भरे

सुख देने वाले प्यारे श्यामसुन्दर हैं। सुखद सेज बिछी हुई है जिसमें ऐसा रंग भरा हुआ है जो कामदेव के सुख को भी उलाहना दे रहा है। रसिक बिहारी जी प्रार्थना करते हैं कि प्रिया-प्रियतम दोनों मिलकर सुखद सेज पर शयन करें।

हौले हौले महल की धरणी चरण धरंत ।
अति मदमाति लाडली गजगत लिएँ डुलंत ।।
लाडली लाल के मदमाती गजगत लिएँ डोले ।
मरकत मणि के अहल-महल में चरण धरत हौले-हौले ।।
लटकी लट अटकी अंसनि पर चटकीली चख लौले ।
लसन हसन में दसन सिखर दुति रंगी रंग तमोले ।।
झुक-झुक देत-लेत अधरामृत समरस पान कपोले ।
श्री हरिप्रिया हितवाय जियन में वारत प्राण अमोलें ।।

भावार्थ - धीरे-धीरे महल की भूमि पर पग रखते हुए श्रीप्रिया-प्रियतम मदमस्त चाल से चल रहे हैं। मरकत मणि से सजे हुए महल में वे चरण रखते हुए मन्द गति से चले जा रहे हैं। झूमती हुई लटें कन्धे पर ही उलझकर रह गई और चमकती हुई आँखें झुकने लगीं। मनमोहक हँसी में दाँतों की सफेदी पान के रंग में रंग गई है। श्रीप्रिया-प्रियतम झुक-झुककर परस्पर अधरामृत का पान करते हैं तथा उनके कपोलों में पान का बीड़ा सुशोभित है। श्रीहरिप्रियाजी का हृदय प्रेम से भर रहा है। तथा उनका सारा तन, मन और धन इस अनुपम छवि पर न्यौछावर जा रहा है।

अब पौढ़न कौ समय भयो ।
इत ढुर गई द्रुमन की छैयाँ उत ढुरि चंद गयो ।।
पौढ़ि रहे दोउ सुखद सेज पर बाढ़त रंग नयो ।
रसिक बिहारि बिहारिन पौढ़े यह सुख दृगन लयो ।।

भावार्थ - अब रात्रि शयन करने का समय हो गया। इधर वृक्षों की छाया ढल गयी है और उधर चन्द्रमा भी अस्ताचल की ओर चले गये हैं। सुखदायनी शय्या पर दोनों लेटे हुए हैं। प्रतिक्षण अभिनव आनन्द की अभिवृद्धि हो रही है। कवि रसिक कहते हैं कि लीलाबिहारी श्रीकृष्ण और बिहारनि राधा, दोनों ही शय्या पर लेटे हुए हैं। इस झाँकी के दर्शन का सुख आँखों को प्राप्त हुआ है, यह कैसा अनुपम सौभाग्य है।

राधे कृष्ण राधे कृष्ण कृष्ण कृष्ण राधे राधे ।
राधे श्याम राधे श्याम श्याम श्याम राधे राधे ।।
जय वृन्दावन जय यमुना, जय वंशीवट जय वृन्दा ।
जय जय जय राधा अभिराम, जय जय जय माधव गुणधाम ।।
जय जय पावन नन्दग्राम, जय बरसाना पूरणकाम ।
जय रासेश्वरी रूप ललाम, जय रसिकेन्द्र शिरोमणि श्याम ।।

श्रीराधिका रानी तत्सुख-सुखिया भाव की मूर्तिमान स्वरूपा हैं। इस संपूर्ण रासोत्सव के माध्यम से उनकी यही चेष्टा होती है कि जो भी जीव उनसे तनिक भी जुड़ा है, उसकी जीवात्मा, उसके वास्तविक स्वरूप को वे प्रेमवश अपने प्रियतम श्रीकृष्ण का स्पर्श-सुख प्रदान कर उसे निहाल कर दें। पूरे उत्सव में सखियाँ अपनी स्वामिनी के इस गुप्त रस-दान की चेष्टा का दर्शन करती आ रही हैं, और अब उनकी करुणा पर वारी-वारी होकर अपनी लाडलीजू के चरणों की वंदना करने लगती हैं।

धनि-धनि लाड़िली के चरन।
अतिहि मृदुल सुगंध सीतल कमल के से बरन।।
नख चंद चारु अनूप राजत जोत जगमग करन।
कुणित नूपुर कुंज बिहरत परम कौतुक करन।।
नंद सुत मन मोद कारी बिरह सागर तरन।
दास परमानंद छिन-छिन स्याम ताकी सरन।।

भावार्थ - श्रीलाडिली के चरण ही परम धन हैं। वे कमल के समान कोमल एवं सुगन्ध से युक्त हैं। उनके नखों से चन्द्रमा के समान प्रकाश निकल रहा है, तथा चरणों में सुंदर नूपुर बाँधे हुए हैं। वे कुञ्जों में विहार करती हुई विभिन्न लीलाएँ करतीं हैं। श्री राधा के चरण, नंदनंदन के विरह ताप को हरने वाले हैं। परमानंददास जी कहते हैं कि श्यामसुन्दर क्षण-क्षण में श्रीजी के उन चरणों की शरणागती ग्रहण करते हैं।

श्री प्रिया-प्रियतम की दिव्य रासलीला सदा से चलती आ रही है, सदा ही चलती रहेगी । ऐसे अतिपावन उत्सव के दर्शन-श्रवण-अनुभव करने का सौभाग्य जो हमें आज प्रेमवश प्रदान किया गया, इस महती कृपा के लिए श्री युगल सरकार, परम पूज्य बाबा-बाबूजी, परम पूज्य महाराजजी-ठाकुरजी, परम पूज्या नानीजी-नानाजी, पूज्या माँ-मौसी, सभी के श्रीचरणों में कोटि कोटि प्रणाम और आभार । पूज्या माँ के चरणों में विशेष आभार, जिनके वर्षों के वात्सल्य और सहनशीलता से हम जैसे अनधिकारी भी इस उत्सव का दर्शन कर सके, इसमें सेवा कर सके, इसके दिव्य रस की कुछ भी छींटें ग्रहण कर सके। भगवान और सभी पूज्य संत-गुरुजनों की इस कृपा-वर्षा का आदर करते हुए उनकी आज्ञा-पालन में हम अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए सदा तैयार रहें, इसी प्रार्थना के साथ अर्पित है श्रीभगवन्नाम नाम कीर्तन।

।।श्रीराधा राधा राधा राधा।।

शयन आरती के पश्चात स्फुट पद

तैं न लख्यौ जब कुँजनि तैं बनिकै निकस्यौ भटक्यौ मटक्यौ री।
सोहत कैसो हरा टटक्यौ अठ कैसो किरीट लसैं लटक्यौ री।।
को रसखानि फिरैं झटक्यौ हटक्यौ ब्रज लोग फिरैं भटक्यौ री।
रूप सबै हरि वा नट को हियरे अटक्यौ अटक्यौ अटक्यौ री।।

भावार्थ: कोई गोपी अपनी सखी से कृष्ण के सौन्दर्य का वर्णन करती हुई कहती है कि हे सखि! तब कृष्ण भटकता हुआ और मटकता हुआ सुन्दर रूप धारण करके कुँज में से निकलता था, तब तूने उसे नहीं देखा। उसके हृदय पर पड़ा हुआ हार कितना शोभायमान था और सिर पर लटकता हुआ मुकुट कितना सुन्दर दिखाई पड़ रहा था। रसखान कहते हैं कि ब्रजवासियों के मना करने पर भी वह रूप से झकझोरा हुआ कृष्ण भटकता हुआ फिर रहा था। उस नटवर कृष्ण का सारा सौन्दर्य मेरे हृदय में अटक गया है, अर्थात् उसके सौन्दर्य का गम्भीर प्रभाव मेरे हृदय पर पड़ा है।

धराऊं निज कर चंवर लै, धारों नैनी नेह।
सोवत जुगल किसोर जहं, सेऊं चरन सनेह॥
कोमल सेज बिछाइकै, कुंज महल के माहिं।
पोढ़ायें पिय प्यारी कौं, निरखि-निरखि सुख पाहिं॥
मंद-मंद मारुत बहै, सीतल मंद सुगंध।
जागत रस-बस दोउ जने, उपजत मोद अनंध॥
श्रीभट्ट सहचरी निरखि कै, वारत प्रान अगाध।
चिरजीवौ जोरी सुखद, राधारमन अराध॥

भावार्थ: हे सखी! मैं अपने हाथों से चँवर लेकर श्रीराधा-कृष्ण के युगल स्वरूप पर डुलाऊँ और प्रेमभरी आँखों से उनकी सेवा करूँ। जब दोनों किशोर-किशोरी विश्राम कर रहे हों, तब मैं प्रेमपूर्वक उनके चरणों की सेवा करूँ। कुंज-महल के भीतर कोमल सेज बिछाकर मैं श्रीप्रियतम और श्रीप्यारी जी को उस पर सुलाऊँ और बार-बार उनके मनोहर स्वरूप को निहारकर अपार सुख प्राप्त करूँ। उस समय शीतल, मंद और सुगंधित वायु बह रही हो। प्रेमरस में डूबे हुए वे दोनों जाग उठें और उनके जागने से मेरे हृदय में असीम आनंद उमड़ पड़े। श्रीभट्टजी कहते हैं कि सहचरी श्रीराधा-कृष्ण के इस मनोहर रूप को देखकर मैं अपने प्राणों को उन पर न्योछावर करती है। सुख प्रदान करने वाले श्रीराधारमण की यह दिव्य जोड़ी चिरकाल तक सुखपूर्वक विराजमान रहे।

ब्रज की बनिता सब घेरि कहैं, तेरो ढारो बिगारो कहा कस री।
अरी तू हमको जम काल भई, नेक कान्ह गही ती कहा रस री।।
रसखानि भली विधि आनि बनी, बसिबो नहीं देत दिसा दस री।
हम तो ब्रज को बसिबोई तजो, बस री ब्रज बैरिन तू बसुरी।।

भावार्थ: कृष्ण अपनी बाँसुरी को बहुत प्रेम करते हैं। उसके प्रेम को देखकर गोपियों के मन में उसके प्रति ईर्ष्या और जलन की भावनाएँ उत्पन्न हो गई हैं। अतः ब्रज की सारी नारियाँ बाँसुरी को घेरकर उससे पूछती हैं कि हे बाँसुरी! हममे से तेरा किसने क्या बिगाड़ा है कि तू हमारे लिए मृत्यु के समान बन गई है? अगर कृष्ण ने तुझे ज़रा-सा छू लिया, तो तुझे कौन-सा भारी आनंद प्राप्त हो गया!
रसखान कवि कहते हैं कि गोपियाँ बाँसुरी से कहने लगीं कि अब तो हम इस परिणाम पर पहुँच गई हैं कि तू हमें यहाँ पर थोड़े दिन भी नहीं बसने देगी। हमने तो ब्रज में रहना ही छोड़ दिया है, इसलिए हे बैरिन बाँसुरी, तू ही अब ब्रज में आनंद से रह!

युगल छबि देखि मेरो हियरा सिरात।
नींद भरे चलत झूमि के, शिथिल भये सब गात।।
कहौं चाहत कछु कहत कछु मुख, कहत कहत रहि जात।
नारायण या विधि निकुंज में, पहुँचे अति अलसात।।

भावार्थ: हे सखी! श्रीराधा-कृष्ण के युगल स्वरूप की मनोहर छवि देखकर मेरा हृदय आनंद से भर उठता है। दोनों के नेत्रों में नींद की खुमारी है और वे धीरे-धीरे झूमते हुए चल रहे हैं। रात्रि-विहार के कारण उनके अंग-अंग में मधुर शिथिलता छाई हुई है। उनकी दशा ऐसी मनोहर है कि वे मुख से कुछ कहना चाहते हैं, पर कहते कुछ और ही हैं। प्रेम और आलस्य की उस मधुर अवस्था में वे बोलते-बोलते ही रुक जाते हैं। कवि नारायण कहते हैं कि इस प्रकार श्रीराधा-कृष्ण अत्यंत अलसाए हुए निकुंज में पधारे हैं।

ब्रजभूमि मोहिनी मैं जानी।
मोहनि कुंज मोहन वृन्दावन, मोहन जमुना पानी।।
मोहनि नारि सकल गोकुल की, बोलत मोहनि बानी।
'श्रीभट्ट' के प्रभु मोहन नागर, मोहनि राधा रानी।।

भावार्थ: मैंने ब्रजभूमि को अत्यंत मनमोहक जाना है। यहाँ के कुंज मनोहर हैं, वृन्दावन मोहक है और यमुना का जल भी मन को आकर्षित करता है। गोकुल की सभी स्त्रियाँ सुंदर और मनमोहक हैं तथा उनकी वाणी भी बड़ी मधुर है। श्रीभट्टजी कहते हैं कि उनके आराध्य श्रीमोहन अत्यंत मनोहर और रसिक हैं तथा श्रीराधारानी स्वयं सबको मोहित करने वाली हैं।

सोवत जुगल चँवर हों डारौं।
कबहुँकु सेऊँ चरन नैननि में, नवतम नेह सुधा रस ढारौं।।
कबहुँक पद पल्लव राधे के अपने नैन कनीनन सारौं।
कबहुँकु 'श्रीभट्ट' नंदलालके कोमल चरन कमल पुचकारौं।।

भावार्थ: हे सखी! मेरी अभिलाषा है कि जब श्रीराधा-कृष्ण विश्राम कर रहे हों, तब मैं उनके ऊपर चँवर डुलाकर उनकी सेवा करूँ। कभी उनके चरणों की सेवा करूँ और अपनी आँखों से उनके चरणों की छवि को हृदय में बसाऊँ। उनके प्रति अपने नवीन और निर्मल प्रेम का अमृत अर्पित करूँ। कभी श्रीराधारानी के कोमल, चरण-पल्लवों को अपनी आँखों से निहारकर उन्हें अपनी आँखों का तारा बना लूँ। श्रीभट्टजी कहते हैं कि मेरी यह भी अभिलाषा है कि मैं नंदलाल श्रीकृष्ण के कोमल कमल-चरणों को बड़े प्रेम से सहलाऊँ और उनकी सेवा करूँ।

वृषभानु दुलारी श्री राधे

प्रिय नख चरन चंद्रिका कब धौं, इन नैनान निहारौंगी।
सुन्दर सुघर रुचिर रचि जावक, कब प्रिय पाँय पखारौंगी॥
पायजेब साजि नूपुर कब धौं, पग बिछियान सँवारौंगी।
ललित माधुरी चरन सरोजैं, चाँपि कबै उर धारौंगी॥

भावार्थ: श्री प्रियाजी के चरण-नख की ज्योति को कब निहारूँगी? उन चरणों में सुंदर मेहँदी की रचना करके कब उन्हें सहलाऊँगी? सुंदर पायजेब, नूपुर एवं बिछिया पहनाकर कब उन्हें सँवारूँगी? (श्री ललित माधुरीजी मन में अभिलाषा करते हैं कि) कब उन चरण-कमलों को हृदय में धारण करूँगी?

ये अभिलाष लडैती मोरी।
तुम लालन संग मुदित बिराजौ, मोहि करो मुख चंद्र चकोरी॥
देहु कृपा करि बेग छबीली, ललित किशोरी मान निहोरी।
निसिदिन नित्त निकुंज भवन में, हाजिर रहौं वृषभान किशोरी॥

भावार्थ: हे श्री लाडलीजी! मेरी ऐसी अभिलाषा है कि आप श्री लालजी के संग प्रसन्नतापूर्वक विराजें और मैं आपके मुख-चंद्र को चकोरी के समान निहारती रहूँ। हे छबीली श्री राधे! कृपा कर मुझे अपने निकुंज में नित्य निवास प्रदान कीजिए। मैं सदा आपकी कृतज्ञ रहूँगी और सेवा के लिए प्रस्तुत रहूँगी।

प्यारी नित ऐसेहिं तुम्हें निहारूँ।
तृण तोरूँ या चंद बदन पै, राई-नोन उतारूँ॥
निज कर करूँ सिंगार तिहारो, मुख पै भ्रमर बिडारूँ।
नारायण जब तुम कछु गावो, मैं ढिंग साज सँवारूँ॥

भावार्थ: हे प्यारी! मैं नित्य ही तुम्हें ऐसे ही निहारती रहूँ! तृण तोड़कर एवं राई-नोन उतारकर (अर्थात् नज़र उतारकर) तुम्हारा शृंगार करूँ एवं (तुम्हारे सुंदर मुख को कमल समझकर आकर्षित हुए) भ्रमरों को हटाती रहूँ। श्री नारायण स्वामीजी अभिलाषा व्यक्त करते हैं कि हे किशोरीजी! जब तुम कुछ गाओ, तब मैं सुंदर साज सजाकर तुम्हारे साथ बजाऊँ।

प्यारी जू कबै निकुंज दिखैहौं।
अपने मोहन रसिकलाल की मृदु मुसक्यान लखैहौं।।
चापत चरन छबीलीं छलसों तुमहुँ करि अनखैहौं।
ललित किशोरी सरद रैन में बलि वा रासै चखैहौं।।

भावार्थ: हे श्रीकिशोरी जी! हे प्यारी जू! आप मुझ पर ऐसी कृपा कब करेंगी कि मैं आपके सुंदर निकुंजों के दर्शन कर सकूँ? वहाँ आपके प्रियतम श्रीमोहन की मधुर मुसकान निहार सकूँ और उनके मनमोहक रूप पर मुग्ध हो सकूँ। हे श्रीराधे! मैं कब आपके सुंदर चरणों की सेवा करूँगी और आपकी मनोहर चितवन तथा प्रेमभरी चंचल अदाओं को देखकर आनंदित होऊँगी? मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि शरद ऋतु की उस सुहावनी रात्रि में होने वाली आपकी दिव्य रासलीला के दर्शन करूँ और उस अलौकिक आनंद पर अपना सर्वस्व न्योछावर कर दूँ।

<u>बाल प्रस्तुति</u>

देखो देखो री नागर नट निर्तत कालिंदी तट।
गोपिन के मध्य राजे मुकुट लटक।।
काछिनी किंकिनि कटि पीतांबर की चटक।
कुंडल किरन रवि रथ की अटक।।
ता-ता थेई ता-ता थेई सबद सकल धट।
उरप तिरप गति पग की पटक।।
रास में श्रीराधे राधे मुरली में एक रट।
नंददास गावै तहाँ निपट निकट।।